International Journal for Research Trends in Social Science & Humanities
Volume 4, Issue 2
Mar-Apr 2026, PP 1-9

पंचायती राज व्यवस्था का ऐतिहासिक और संवैधानिक पुनरावलोकन

प्रशांत कुमार
शोधार्थी
राजनीति विज्ञान विभाग
मुंगेर विश्वविद्यालय, मुंगेर (बिहार) 811201
ईमेल: theprashantboy@gmail.com

सारांश

भारतीय लोकतंत्र की सफलता का आधार केवल संसदीय संस्थाओं तक सीमित नहीं है बल्कि इसकी जड़ें स्थानीय स्वशासन की परंपराओं में निहित रही हैं। पंचायती राज व्यवस्था भारतीय ग्रामीण जीवन की एक प्राचीन संस्था रही है, जिसका उद्देश्य जनसहभागिता, विकेंद्रीकरण एवं ग्रामीण विकास को सुनिश्चित करना है। स्वतंत्रता के पश्चात् पंचायती राज को सुदृढ़ बनाने के लिए विभिन्न समितियों की अनुशंसाओं के आधार पर संस्थागत सुधार किए गए। जिनमें विशेष रूप से 73वें संविधान संशोधन अधिनियम, 1992 ने पंचायती राज संस्थाओं को संवैधानिक दर्जा प्रदान कर लोकतंत्र को जमीनी स्तर तक सशक्त बनाया। यह शोध-पत्र पंचायती राज व्यवस्था के ऐतिहासिक विकास, संवैधानिक प्रावधानों, वर्तमान प्रासंगिकता तथा चुनौतियों का विश्लेषण प्रस्तुत करता है। अध्ययन में यह निष्कर्ष निकलता है कि पंचायती राज व्यवस्था लोकतंत्र के विकेंद्रीकरण का सशक्त माध्यम है, किंतु वित्तीय स्वायत्तता, प्रशासनिक क्षमता और राजनीतिक हस्तक्षेप जैसी चुनौतियाँ इसके प्रभावी संचालन में बाधा उत्पन्न करती हैं।

शब्द कुंजी (Keywords): पंचायती राज, विकेंद्रीकरण, 73वां संविधान संशोधन, ग्राम सभा, स्थानीय स्वशासन, ग्रामीण विकास।

भूमिका

भारतीय लोकतंत्र की जड़ों को यदि समझना हो, तो उसका सबसे प्रामाणिक आधार स्थानीय स्वशासन की परंपरा में खोजा जाना चाहिए। भारतीय समाज की संरचना ऐतिहासिक रूप से ग्राम-आधारित रही है, जहाँ सामाजिक, आर्थिक एवं प्रशासनिक निर्णय स्थानीय समुदाय द्वारा सामूहिक रूप से लिए जाते थे। इस संदर्भ में पंचायती राज व्यवस्था केवल प्रशासनिक ढांचा नहीं, बल्कि भारतीय राजनीतिक संस्कृति की एक जीवंत अभिव्यक्ति है। यह व्यवस्था लोकतंत्र को नीचे से ऊपर तक मजबूत करने का माध्यम प्रदान करती है तथा शासन को जनसाधारण के निकट लाती है।

International Journal for Research Trends in Social Science & Humanities
Volume 4, Issue 2
Mar-Apr 2026, PP 1-9

महात्मा गांधी ने ग्राम स्वराज की अवधारणा प्रस्तुत करते हुए स्पष्ट किया था कि वास्तविक लोकतंत्र तभी संभव है जब प्रत्येक ग्राम आत्मनिर्भर एवं स्वशासी इकाई के रूप में कार्य करे। गांधी के अनुसार, "स्वतंत्र भारत की संरचना का आधार गांवों की स्वायत्तता पर आधारित होना चाहिए।" यह विचार पंचायती राज व्यवस्था के वैचारिक विकास का मूल आधार बना। स्वतंत्रता के बाद भारतीय संविधान निर्माताओं ने भी स्थानीय स्वशासन की आवश्यकता को स्वीकारते हुए संविधान के नीति निर्देशक तत्वों में अनुच्छेद 40 के अंतर्गत राज्य को ग्राम पंचायतों के संगठन का निर्देश दिया।

पंचायती राज व्यवस्था का महत्व केवल प्रशासनिक विकेंद्रीकरण तक सीमित नहीं है, बल्कि यह सामाजिक न्याय, समावेशी विकास एवं लोकतांत्रिक सहभागिता को भी बढ़ावा देती है। यह व्यवस्था ग्रामीण जनता को निर्णय प्रक्रिया में शामिल कर शासन को अधिक उत्तरदायी बनाती है। साथ ही साथ महिलाओं, अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों को प्रतिनिधित्व प्रदान कर पंचायती राज संस्थाएँ सामाजिक समता को भी सुदृढ़ करती हैं।

वर्तमान वैश्वीकरण तथा उदारीकरण के दौर में पंचायती राज व्यवस्था का महत्व और अधिक बढ़ गया है, क्योंकि स्थानीय स्तर पर विकास की योजना बनाना एवं संसाधनों का कुशल उपयोग करना अत्यंत आवश्यक हो गया है। इस संदर्भ में पंचायती राज संस्थाएँ लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण का सशक्त माध्यम बनकर उभरी हैं। अतः पंचायती राज व्यवस्था का ऐतिहासिक और संवैधानिक पुनरावलोकन करना न केवल शैक्षणिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है, बल्कि समकालीन प्रशासनिक व्यवस्था को समझने के लिए भी आवश्यक है। पंचायती राज संस्थान एक लंबी विकास यात्रा के बावजूद भी अपने लक्षित उद्देश्यों को प्राप्त नहीं कर सकी है।

पंचायती राज का अर्थ पंचायत द्वारा गांव का शासन करना है, ताकि गांव का पुनर्निर्माण हो सके। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद जनता को अधिक से अधिक शासन में सहभागी बनने के लिए पंचायत की भूमिका को स्वीकारा गया। ऐसी आशा की गई कि इससे ग्रामीण समाज को स्वशासन का अवसर प्राप्त होगा। अतः ग्रामीण समाज के विकास के लिए तथा आर्थिक व अन्य गतिविधियों को प्रजातांत्रिक स्वरूप प्रदान करने के लिए जो व्यवस्था स्थापित की गई उसी को पंचायती राज कहा जाता है। कुछ लोग इसे प्रशासन की एक एजेंसी, नीचे के स्तर पर प्रजातंत्र का विस्तार, तथा स्थानीय ग्रामीण शासन का घोषणा पत्र भी मानते हैं।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् भारत में पंचायती राज व्यवस्था की स्थापना की गई इसके द्वारा राजनीतिक तथा आर्थिक सत्ता का विकेंद्रीकरण किया गया। इससे भारतीय राजव्यवस्था का विकेंद्रीकरण हो रहा है और देश में एक सी स्थानीय संस्था

International Journal for Research Trends in Social Science & Humanities
Volume 4, Issue 2
Mar-Apr 2026, PP 1-9

के निर्माण से उनकी एकता भी बढ़ रही है। इसकी शुरुआत का श्रेय प्रथम प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू जी को है जिन्होंने राजस्थान राज्य के नागौर जिला से 2 अक्टूबर 1959 को इसकी शुरुआत की। नेहरू जी का कहना था कि गांव के लोगों को अधिकार सौंपना चाहिए, उन्हें काम करने दो, चाहे वह हजार गलतियां करें, इससे घबराने की जरूरत नहीं है, पंचायत को अधिकार दो।

बलवंत राय मेहता ने अपनी रिपोर्ट में पंचायती राज व्यवस्था के लिए त्रि-स्तरीय योजना का परामर्श दिया। इस योजना के अंतर्गत निम्न स्तर पर ग्राम सभा तथा ग्राम पंचायत है तथा उच्च स्तर पर जिला परिषद है। और इन दोनों के मध्य में पंचायत समितियां हैं। यद्यपि भारत में पंचायत का उल्लेख ऋग्वेद, बौद्ध काल, मौर्य काल, गुप्त काल तथा मुगल काल में निरंतर मिलता है। फिर भी इन्हें औपचारिक रूप से संगठित करने का सबसे पहला प्रयास अंग्रेजों ने किया था।

ग्राम पंचायत का इतिहास

ग्राम पंचायतों के इतिहास का अध्ययन करने पर हम पाते हैं कि इसकी स्थापना और विकास हाल के वर्षों की कोई घटना नहीं है, बल्कि यह अतीत काल से ही विकसित होती हुई चली आ रही है। इस दिशा में सर्वप्रथम हम पाते हैं कि प्राचीन भारतीय इतिहास के **हड़प्पा सभ्यता या सिंधु घाटी की सभ्यता**, जो कि मुख्यतः नगरीय सभ्यता थी, में भी सामूहिक रूप से गांवों के शासन व प्रशासन का प्रबंधन होता था। इस सभ्यता के ग्राम स्वशासन का प्रमाण कृषि संबंधी मिले विभिन्न प्रमाणों यथा- हल, हल-रेखा, बैल आदि के आधार पर इसके ग्रामीण सभ्यता और ग्राम स्वशासन का अनुमान लगाया जाता है।

इसके पश्चात् **वैदिक सभ्यता**, जो कि मुख्यतः ग्रामीण सभ्यता थी, में भी ग्राम स्वशासन के उदाहरण देखने को मिलता है, जैसे- **अथर्ववेद** में वर्णित **सभा एवं समिति** को प्रजापति की दो पुत्रियाँ कहा गया है। अर्थात् वैदिक काल के समय सभा और समिति के माध्यम से ग्रामीण व्यवस्था का संचालन होता था, जो कि एक संसद की तरह काम करती थी। जिसमें सभा संभ्रांत लोगों की और समिति सामान्य जनता का प्रतिनिधित्व करती थी। इस समय गांव व गांवों के समूह के संचालन के लिए विभिन्न समितियों का गठन किया जाता था और इसके माध्यम से संपूर्ण ग्रामीण व्यवस्था का संचालन होता था।

फिर कालांतर में **मौर्य काल** में ग्राम स्वशासन काफी विकसित था, जहां ग्राम शासन की सबसे छोटी इकाई थी, जिसके प्रमुख को **ग्रामिक या मुखिया** कहा जाता था, जो लोगों द्वारा चुना जाता था। यह ग्राम सभा की मदद से सार्वजनिक

कार्यों जैसे- सिंचाई और करों का प्रबंधन करता था और यह बहुत हद तक एक स्वायत्त इकाई के रूप में कार्य करती थी, जिस पर केंद्रीय हस्तक्षेप बहुत कम था, लेकिन केंद्रीय सरकार अपने गुप्तचरों के माध्यम से इस पर निगरानी रखती थी।

इसके बाद **गुप्त काल** में भी ग्राम प्रशासन की सबसे छोटी इकाई होने के साथ-साथ एक स्वायत्त इकाई के रूप में संचालित होती थी, जहां ग्राम सभा या ग्राम जनपद या **पंचमंडली** का प्रमुख ग्रामिक या ग्रामपति कहलाता था, तथा इसके सदस्यों को **महत्तर** कहा जाता था। ग्रामिक और महत्तर मिलकर भूमि कर, न्याय, कृषि, सिंचाई, कुआं, तालाबों आदि और विभिन्न विवादों का भी निपटारा करता था, जिससे ग्रामीण स्तर पर सशक्त स्थानीय स्वशासन की व्यवस्था थी।

दक्षिण भारत के इतिहास में **चोल साम्राज्य** अपनी ग्राम स्वशासन के लिए जाना जाता है। चोल कालीन ग्राम स्वशासन अत्यंत विकसित और स्थानीय स्वायत्तता पर आधारित था, जहां **उर और महासभा** के द्वारा गांवों के प्रबंधन, न्याय और राजस्व का संचालन होता था। उर जो कि सामान्य ग्राम सभा और महासभा जो कि ब्राह्मणों की सभा का प्रतिनिधित्व करता था, दोनों मिलकर एक संसद की तरह कार्य करती थी, जो चोल प्रशासन की प्रमुख विशेषता ग्राम स्वशासन को मजबूती प्रदान करती थी।

फिर **सल्तनत काल** में प्रशासन केंद्रीकृत था, जिसका नेतृत्व सुल्तान करता था। हालांकि ग्राम स्तर पर स्वशासन की परंपरा कुछ हद तक जारी रही, जिसमें स्थानीय अधिकारी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते थे। भूमि कर की वसूली और ग्रामीण व्यवस्था को बनाए रखने के लिए **खुत, मुकद्दम और चौधरी** जैसे अधिकारियों का प्रयोग किया जाता था। इसमें खुत- भू-राजस्व के संग्रहकर्ता के रूप में, मुकद्दम- ग्राम प्रधान के रूप में और चौधरी न्यायिक व्यवस्था के प्रमुख के रूप में अपनी भूमिका का निर्वहन करते थे। इस समय ग्राम प्रशासन में केंद्र सरकार का हस्तक्षेप सीमित था और वह मुख्य रूप से राजस्व संग्रह तक केंद्रित था।

मुगलकालीन प्रशासन केंद्रीकृत था फिर भी गांवों को बहुत हद तक स्वायत्तता प्राप्त थी, जहां ग्राम पंचायतें स्थानीय स्वशासन के कार्यों का निर्वहन करती थीं। सरकार गांव के आंतरिक मामलों में सीधे हस्तक्षेप नहीं करती थी। मुगल शासकों ने गांवों को पारंपरिक स्वायत्त संस्थाओं के रूप में मान्यता दी। गांवों की साफ़ सफाई, शिक्षा और सुरक्षा आदि की देखभाल मुख्य रूप से ग्राम पंचायतों द्वारा किया जाता था। ग्राम पंचायत गांव के बुजुर्गों की एक सभा होती थी, जो विवादों को सुलझाने और कानून व्यवस्था को बनाए रखने के लिए जिम्मेदार होता था।

ब्रिटिश शासन के समय ग्राम स्वशासन की पारंपरिक व्यवस्था काफी हद तक कमजोर हो गई थी, क्योंकि अंग्रेजों ने सत्ता के अधिक से अधिक केंद्रीकरण पर जोर

दिया और गांवों को मुख्य रूप से राजस्व संग्रह का एक साधन मात्र माना। हालांकि बाद में कुछ सुधारों के माध्यम से वर्तमान स्थानीय स्वशासन की संस्थाओं की नींव पड़ी। 19वीं सदी के उत्तरार्ध में **लॉर्ड रिपन** के समय उनके **1882 के प्रस्ताव** के द्वारा आधुनिक स्थानीय स्वशासन संस्थानों जैसे- नगरपालिकाओं और जिला बोर्डों की स्थापना का प्रयास किया गया। इन नवगठित स्थानीय निकायों को सीमित वित्तीय संसाधन और शक्तियां दी गई, इसका मुख्य उद्देश्य स्थानीय सेवाएं जैसे- शिक्षा, स्वास्थ्य आदि प्रदान करना था, लेकिन फिर भी यह केंद्रीय नियंत्रण में थे और वास्तविक स्वशासन का सर्वथा अभाव था। ब्रिटिश काल में ग्राम स्वशासन की सदियों पुरानी व्यवस्था को कमजोर किया गया, लेकिन फिर भी 19वीं सदी के उत्तरार्ध में शुरू किए गए स्थानीय स्वशासन ने आधुनिक लोकतांत्रिक पंचायती राज व्यवस्था की नींव रखी।

ग्राम पंचायत की वर्तमान संवैधानिक स्थिति

आधुनिक ग्राम पंचायत का मतलब सिर्फ ग्रामीण प्रशासन नहीं, बल्कि तकनीक नवाचार और सामुदायिक भागीदारी से सशक्त ग्राम पंचायत का निर्माण करना भी शामिल है। साथ ही ग्राम पंचायत विकास योजना, डिजिटल उपकरणों और युवाओं की भागीदारी से विकसित भारत के सपने को साकार करने वाली एक जीवंत, पारदर्शी और आत्मनिर्भर स्थानीय स्वशासन प्रणाली है, जो शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार और स्वच्छता जैसे क्षेत्रों में समावेशी विकास सुनिश्चित करना भी शामिल है। पंचायती राज संस्थान ग्रामीण स्थानीय स्वशासन की एक प्रणाली है। स्थानीय स्वशासन का अर्थ है स्थानीय लोगों द्वारा निर्वाचित निकायों द्वारा स्थानीय मामलों का प्रबंधन है।

जमीनी स्तर पर लोकतंत्र की स्थापना के लिए **73वें संविधान संशोधन अधिनियम 1992** के माध्यम से पंचायती राज संस्थाओं को संवैधानिक मान्यता प्रदान की गई और उन्हें ग्रामीण विकास का कार्य सौंपा गया। लेकिन संविधान में पंचायतों के इस समावेशन को तत्कालीन नीति निर्माताओं की सर्वसम्मति प्राप्त नहीं थी। इसका सबसे प्रबल विरोध स्वयं संविधान निर्माता **डॉ. बी. आर. अंबेडकर** ने किया था, क्योंकि नीति निर्देशक सिद्धांत बाध्यकारी सिद्धांत नहीं हैं। इसलिए पूरे देश में इसके संबंध में सार्वभौमिक या एक समान संरचना का सदा अभाव ही रहा है।

स्वतंत्रता के बाद **2 अक्टूबर 1952** को गांधी जयंती की पूर्व संध्या पर **सामुदायिक विकास कार्यक्रम** को लागू किया गया। इसमें ग्रामीण विकास की लगभग सभी गतिविधियों को शामिल किया गया, जिन्हें लोगों की भागीदारी के साथ ग्राम

पंचायतों की सहायता से लागू किया जाना सुनिश्चित किया गया। वर्ष **1953** में सामुदायिक विकास कार्यक्रम के सहयोग के लिए **राष्ट्रीय विस्तार सेवा** की शुरुआत की गई, और वर्ष **1957** में राष्ट्रीय विकास परिषद ने सामुदायिक विकास कार्यक्रम के कार्यान्वयन पर विचार करने के लिए **बलवंत राय मेहता** की अध्यक्षता में एक समिति का गठन किया। इस समिति ने **त्रि-स्तरीय पंचायती राज संस्थाओं** का सुझाव दिया:

- **ग्राम स्तर पर:** ग्राम पंचायत
- **प्रखंड स्तर पर:** पंचायत समिति
- **जिला स्तर पर:** जिला परिषद

और इस प्रकार लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण की यह योजना **2 अक्टूबर 1959** को राजस्थान के **नागौर** से इसकी शुरुआत हुई। इसके पश्चात् **1 नवंबर 1959** को आंध्र प्रदेश इस योजना को लागू करने वाला दूसरा राज्य बना। फिर कालांतर में सरकार ने वर्ष **1977** में **अशोक मेहता** की अध्यक्षता में समिति का गठन किया जिसने मंडल पंचायत और जिला परिषद की सिफारिश की। तत्पश्चात् **जी. वी. के. राव समिति** ने 1985 में जिले को योजना की बुनियादी इकाई बनाने और नियमित चुनाव आयोजित कराने की सिफारिश की। जबकि **एल. एम. सिंघवी समिति** ने पंचायतों को सशक्त करने के लिए उन्हें संवैधानिक दर्जा प्रदान करने तथा अधिक वित्तीय संसाधन सौंपने की सिफारिश की।

वर्तमान में ग्राम पंचायतों के सफल संचालन को सुनिश्चित करने के लिए केंद्र सरकार के साथ-साथ विभिन्न राज्यों की सरकारें भी इस दिशा में अपना कदम आगे बढ़ा रही हैं। ग्राम पंचायतें ग्रामीण स्थानीय स्वशासन की रीढ़ हैं, जो 73वें संविधान संशोधन के बाद त्रि-स्तरीय पंचायती राज संस्थाओं का हिस्सा बनीं। विभिन्न राज्यों में उनकी स्थिति में भिन्नता है। इसका कार्य जल, स्वच्छता, सड़कें, शिक्षा और कृषि आदि क्षेत्रों में विकास करना है, लेकिन धन और शक्तियों के हस्तांतरण में राज्यों के बीच अंतर के कारण इनकी स्वायत्तता और कार्य क्षमता अलग-अलग है, जैसे- **कर्नाटक, केरल व तमिलनाडु** शीर्ष पर हैं, जबकि कुछ राज्य अभी भी वित्तीय और प्रशासनिक चुनौतियों का सामना कर रहे हैं। अतः समय-समय पर विभिन्न प्रयासों के माध्यम से इन चुनौतियों का समाधान किया जा रहा है।

वर्तमान प्रासंगिकता और महत्त्व

पंचायती राज सर्वथा असफल नहीं रहा है इसकी अनेक उपलब्धियां भी हैं। राजनीतिक दृष्टि से इसने भारतवर्ष में प्रजातंत्र के बीजारोपण का काम किया है। इसने एक औसत नागरिक को पहले से अधिक अपने अधिकारों के प्रति जागरूक बनाया।

प्रशासनिक दृष्टि से इसमें कुलीन नौकरशाही वर्ग और जनता के बीच खाई को पाटा है। सामाजिक और सांस्कृतिक दृष्टि से इसने नया नेतृत्व पैदा किया है। यह नेतृत्व सामाजिक दृष्टिकोण से अधिक आधुनिक और सामाजिक परिवर्तनों का पक्षधर भी है। पंचायती राज ग्रामीण जनता के मन में विकास की भावना जागृत करने में मदद की है।

बलवंत राय मेहता समिति ने पंचायत को अधिक प्रभावशाली बनाने के लिए जिला स्तर पर स्थानीय सरकार को तीन स्तरों पर संगठित करने, अप्रत्यक्ष चुनाव तथा इन स्तरों के वास्तविक संपर्क के लिए मुख्य रूप से सुझाव दिए हैं। कांग्रेस सरकार ने इस रिपोर्ट के सुझाव को मानते हुए सभी राज्यों को इन्हें लागू करने के निर्देश दिए। 1959 ईस्वी तक प्रजातांत्रिक विकेंद्रीकरण पर आधारित इस व्यवस्था को संपूर्ण भारत में तीन स्तरों पर लागू किया गया है। यह तीन स्तर हैं: ग्राम स्तर पर ग्राम पंचायत, मध्य स्तर पर पंचायत समिति और जिला स्तर पर जिला पंचायत। ग्राम स्तर पर ग्राम पंचायत के प्रत्येक चुनाव का निर्णय राज्यों द्वारा लिया गया तथा मध्य स्तर पर अधिकतर राज्यों ने अप्रत्यक्ष परंतु कुछ राज्यों ने प्रत्यक्ष तथा जिला स्तर प्रत्यक्ष चुनाव का निर्णय लिया गया है। इस प्रकार थोड़े बहुत अंतर करते हुए 12 राज्यों ने 1959 तक इस रिपोर्ट को लागू किया। मध्य स्तर पर जिला पंचायत तथा जिला स्तर के संगठनों को विभिन्न राज्यों में विभिन्न नाम से जाना जाता है। जैसे मध्य स्तर को असम में आंचलिक पंचायत, मध्य प्रदेश में जनपद पंचायत, तमिलनाडु में पंचायत यूनियन काउंसिल, उत्तर प्रदेश में क्षेत्र समिति, गुजरात तथा मैसूर में तालुका पंचायत तथा शेष राज्यों में पंचायत समिति के नाम से पुकारा जाता है।

जिला स्तर पर संगठन को आंध्र प्रदेश, बिहार, महाराष्ट्र, पंजाब, राजस्थान, उत्तर प्रदेश तथा पश्चिम बंगाल में जिला परिषद, मद्रास तथा मैसूर में जिला विकास काउंसिल, ओडिशा में जिला सलाहकार काउंसिल, गुजरात तथा मध्य प्रदेश में जिला पंचायत कहा जाता है। इन तीनों द्वारा सुचारू रूप से कार्य करने पर बल दिया गया, ताकि ग्रामीण पुनर्निर्माण अधिक प्रभावशाली ढंग से किया जा सके।

निष्कर्ष

इस प्रकार कहा जा सकता है कि ग्राम पंचायतों के सामने अपनी स्थापना से लेकर आज तक उन्हें कई तरह की समस्याओं का सामना करना पड़ा है, इसके बावजूद भी ग्राम पंचायतें अपने उद्देश्यों और लक्ष्यों को प्राप्त करने में काफी हद तक सफलता प्राप्त की है। आज भी ग्राम पंचायतों के सामने सबसे बड़ी समस्या **वित्त** को लेकर है, जिस वजह से वह वित्तीय निर्भरता की स्थिति से गुजर रहा है। इसका आलम यह है कि लगभग सभी राज्यों की ग्राम पंचायतें केंद्रीय वित्त पर निर्भर हैं, और यह सहायता

राज्यों को असमान रूप से प्राप्त है। परिणामस्वरूप **केरल, कर्नाटक और तमिलनाडु** जैसे राज्य पंचायती राज सूचकांक में **'परफॉर्मर'** की श्रेणी में आते हैं, जबकि **बिहार** जैसे राज्य **'आकांक्षी'** श्रेणी में हैं।

इस प्रकार स्थानीय स्वशासन की संस्थाएं न केवल आधुनिक नागरिक जीवन के लिए अपरिहार्य हैं, बल्कि यह प्रजातंत्र की निर्वाहक भी बन गई हैं। विद्वानों के इस मत में कोई अतिशयोक्ति प्रतीत नहीं होती है कि स्थानीय संस्थाओं के बिना न तो लोकतंत्र के आदर्शों को साकार किया जा सकता है, और ना ही किसी स्थायी प्रजातांत्रिक राज्य का उनके बिना विकास संभव है। आधुनिक अनुसंधानों ने यह सिद्ध कर दिया है कि समस्त विकास योजनाओं के लक्ष्यों की प्राप्ति व सफलता नागरिकों की अधिकतम सहभागिता पर निर्भर करती है जो स्थानीय संस्थाओं के माध्यम से स्वाभाविक रूप से प्राप्त की जा सकती है।

संदर्भ सूची

1. **बंसल, वंदना** (2004) "पंचायती राज में महिला भागीदारी" कल्पाज पब्लिकेशन, नई दिल्ली।
2. **महिपाल, डॉ.** (2023) "ग्राम पंचायत कार्य व शक्तियां" वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली।
3. **यादव, दीपक** (2020) "आधुनिक ग्राम पंचायत" ब्लू रोज़ पब्लिशर्स, नोएडा, उत्तर प्रदेश।
4. **अग्रवाल, प्रमोद कुमार** (2019) "भारत में पंचायती राज" प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली।
5. **कर्णावत, शशि** (2017) "पंचायती राज व्यवस्था में रोजगार" अर्जुन पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली।
6. **सिंह, डॉ. राजेन्द्र प्रसाद** (1987) "बिहार में ग्राम पंचायत" बिहार हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, पटना।
7. **महिपाल, डॉ.** (2019) "पंचायती राज चुनौतियां एवं संभावनाएं" NBT INDIA।
8. **शर्मा, रश्मि** (2022) "स्थानीय स्वशासन" SBPD पब्लिकेशन।
9. **शुक्ल, अमित** (2023) "सशक्त पंचायत समृद्ध भारत की संकल्पना" प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली।
10. **सिंह, डॉ. सीताराम** (2012) "बिहार में ग्राम पंचायत एवं सुशासन" बिहार हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, पटना।
11. **माहेश्वरी, श्रीराम** (2017) "भारत में स्थानीय शासन" लक्ष्मी नारायण अग्रवाल एजुकेशनल पब्लिशर्स, आगरा, उत्तर प्रदेश।